Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१·६

प्रेरक-वाक्य

स्वामी सत्यपति जी परिव्राजक
के प्रवचनों में से संकलित

प्रकाशक

दर्शन योग महाविद्यालय
आर्य वन, रोजड़, पत्रालय : सागपुर,
जि. साबरकांठा - ३८३३०७ (गुजरात)
दूरभाष : (०२७७४) ७७२१७

19971221

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ३म्

दो शब्द

गुरूवर्य पूज्य स्वामी सत्यपति जी परिव्राजक समय समय पर विद्यालय में ब्रह्मचारियों के निरीक्षण - परीक्षण हेतु आते रहते हैं तथा अपने जीवन भर के योगाभ्यास के अनुभवों को प्रवचनों और चर्चाओं में सुनाते रहते हैं।

विद्यालय के ही एक स्नातक ब्र. सत्यजित् जी दर्शनाचार्य ने पूज्य स्वामी जी के प्रवचनों में से कुछ प्रेरक सैद्धान्तिक वाक्यों का संग्रह किया है, जो सरल होते हुए भी गंभीर आशय को लिये हुवे हैं। जिज्ञासु योगसाधकों तथा धार्मिक सज्जनों के लिए भी ये लाभकारी होवें इस उद्देश्य से इन्हें लघु पुस्तिका के रूपमें प्रकाशित कराया जा रहा है, यह प्रसन्नता की बात है। आशा है इसे पढ़कर योगाभ्यासी महानुभावों का योग मार्ग प्रशस्त होगा।

ज्ञानेश्वरार्य :
दर्शन योग महाविद्यालय
आर्य वन, रोजड, पो. सागपुर,
जि. साबरकांठा (गुजरात) ३८३३०७

१९९७१२२१

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संकलयिता – ब्र. सत्यजित् दर्शनाचार्य
प्रकाशन तिथि - पौष २०५४, जनवरी १९९८
संस्करण - प्रथम

अनुक्रमणिका

	विषय	पृष्ठ
१	लक्ष्य	३
२	उत्थान	५
३	विवेक वैराग्य	९
४	ज्ञान-अज्ञान	९
५	सम्यक् दृष्टि	११
६	कुछ तथ्य	१३
७	आत्म निरीक्षण	१८
८	दोष	२०
९	कुसंस्कार	२३
१०	उचित अनुचित व्यवहार	२५
११	सुख-दुःख	२६
१२	सत्य-असत्य	२८
१३	उपासना	३१
१४	मनोनियंत्रण	३२

मुद्रक : आकृति प्रिन्टर्स, अहमदाबाद. फोन : २७४८९७४

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(लक्ष्य)

१. मनुष्य जीवन का अन्तिम और परम लक्ष्य शास्त्रकारों ने ईश्वर साक्षात्कार करना ही बताया है क्योंकि सभी जीव पूर्ण और स्थायी सुख चाहते हैं और दुःखों से पूरी तरह छूटना चाहते हैं। यह स्थिति ईश्वर प्राप्ति से ही संभव है, अन्य किसी लक्ष्य को प्राप्त करने से नहीं हो सकती।

२. यद्यपि मनुष्यजीवन सत्य-असत्य को जानने-जनाने, तदुपरांत सत्य को ग्रहण व असत्य को त्याग करने-कराने के लिए है, परन्तु इसका भी प्रयोजन है, वह है दुःखों से पूरी तरह छूटना व शुद्ध और स्थायी सुख को प्राप्त करना।

३. वर्षों तक हमारे विचार-चिंतन का विषय यह रहना चाहिए कि मानव जीवन की सफलता किसमें है। इसका पूर्ण निर्णय करें, संशय रहित स्थिति उत्पन्न करें, और इस स्थिति को दृढ़ बनायें, तभी मोक्ष प्राप्ति के मार्ग पर चल सकते हैं।

४. प्रेय मार्ग में दुःख और मानव जीवन की असफलता है। तथा श्रेय मार्ग में सुख व मानव जीवन की सफलता है। योगाभ्यासी को अपने मन में यह अनुभूति बनाये रखनी चाहिए। इससे उसका मोक्ष प्राप्ति का लक्ष्य स्थिर रहेगा।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. ब्रह्मप्राप्ति का लक्ष्य थोड़े से ज्ञान व थोड़े से चिंतन-मनन से निश्चित नहीं होता। अनेक वर्षों तक प्रमाणों से कस कर देखते रहना पड़ता है।

६. कई बार व्यक्ति भावुकता से भी ब्रह्मवेत्ता बनने का लक्ष्य बना लेता है। लक्ष्य को बिना प्रमाणों से कसे, बिना बाधक-साधक का निर्णय किये, बिना अपनी सामर्थ्य जाने ऐसा निर्णय टिक नहीं पाता है।

७. ईश्वर प्राप्ति का लक्ष्य बना लिया, पर्याप्त सोच-विचार लिया, पर्याप्त निर्णय भी लिये, तो भी व्यक्ति में छिद्र मिलेंगे। देखते जाइये, न्यूनतायें मिलती जायेंगी, और देखते जाइये, न्यूनतायें और अधिक मिलती जायेंगी।

८. संघर्ष करते रहे तो आगे चलकर यह वैराग्य/मोक्ष का लक्ष्य ही अति प्रिय लगेगा, उसी में सुख मिलेगा, इसके विपरीत बातें अति हानिकर कष्टकर लगेंगी। ऐसी दृढ़ता आ जायेगी।

९. जो व्यक्ति पूर्वकालीन ऋषियों व आज के लोगों के लक्ष्य की तुलना नहीं करता वह भटकेगा।

१०. मुख्य लक्ष्य ईश्वर प्राप्ति का रखने पर यम नियम के पालन में अतिश्रद्धा, प्रेम पैदा हो जायेगा।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

११. ईश्वर को प्रमुख लक्ष्य बनाकर वही चल सकता है जो त्रिकालाबाधित सत्य को ही जानना चाहता है।

(उत्थान)

१. सहनशील, सत्यग्राही, जिज्ञासु व्यक्ति ही योग मार्ग में आगे बढ़ सकता है।

२. आध्यात्मिक प्रगति के लिए व्यक्ति को अपनी हर मान्यता को उधेड़ उधेड़ कर देखना पड़ता है, उनकी प्रमाणों से चीरफाड़ करनी पड़ती है, तभी गलत मान्यतायें शिथिल होती हैं व सही मान्यतायें दृढ़ हो पाती हैं।

३. स्थूलबुद्धि से सूक्ष्मबुद्धि , आचरण न्यूनता से उत्कृष्ट आचरण व ज्ञान, कर्म, उपासना में गति होते जाने से व्यक्ति महान् बन जाता है।

४. सदा मृत्यु को देखने वाला व्यक्ति तेजी से सोचता है, तेजी से करता है। फलतः लक्ष्य की ओर तीव्र प्रगति होती है।

५. मन में कामादि विकार न आने देने का एक उपाय यह भी है कि स्वयं को हमेशा उत्तम कार्यों में व्यस्त रखना, महान् लक्ष्य बनाकर उसकी पूर्ति के लिये प्रयत्नशील रहना।

६. व्यक्ति दिनभर बनता-बिगड़ता रहता है। उल्टे ज्ञान,

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर्म, उपासना से बिगड़ता रहता है व सच्चे ज्ञान, कर्म, उपासना से सुधरता रहता है। साधक इस बात को सदा ध्यान में रखता है, सजग रहता है व अपने को सुधारता रहता है। यही प्रक्रिया लम्बे समय तक चलते रहने पर इसमें दृढ़ता आ जाती है।

७. जीवन की सफलता के लिये अतिसावधान होकर चलना पड़ता है, यथा मैं क्या देखूँ, क्या न देखूँ, क्या सुनूँ, क्या न सुनूँ, क्या जानूँ, क्या न जानूँ, क्या करूँ, क्या न करूँ।

८. संसार में अनेक प्रकार की विचित्र घटनायें घटती ही रहती हैं, पर योगाभ्यासी सदा देखता रहता है कि उनका मुझ पर क्या प्रभाव हो रहा है, मेरा मोक्ष लक्ष्य शिथिल तो नहीं हो रहा है ? यदि दुष्प्रभाव हो भी जाये तो शीघ्र ही उसे हटा देता है।

९. स्वयं ब्रह्मवेत्ता बनने तक बड़ों के निर्देशन में रहे, गुरू के अनुसार चले, तभी कल्याण संभव है, अन्यथा पतन।

१०. प्रारंभिक साधक सोचता है कि संसार के दुःख मिश्रित सुखों को छोड़ दिया तो मेरे पास क्या बचेगा ? एक तरफ तो इन सांसारिक सुखों को छोड़ देवें दूसरी ओर अभी ईश्वर का

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुख मिलना प्रारंभ नहीं हुआ है तो मेरे पास क्या रहेगा ? मैं तो खाली हो जाऊंगा। तब ऐसा सोचे की संसार का सुख छोड़ते ही तृष्णाक्षय जन्य संतोष-सुख की प्राप्ति होती है। जो कि संसार के बड़े से बड़े सुख से भी महान् होता है।

११. नया साधक प्रारम्भ में समाज सेवा कम करे, पर करे अवश्य। अपने मन में आगे की योजना भी सदा रखे कि मैं इतना योग्य बनकर, ऐसे समाज का उपकार करूंगा। यथाशक्ति निष्काम भाव से परोपकार करना आवश्यक है।

१२. संसार का उपकार किए बिना कोई योगी नहीं बन सकता। जैसे ईश्वर हमें सत्यज्ञान-वेद देता है वैसे ही हमें भी अन्यों को देना चाहिए, और सत्य ज्ञान की रक्षा करनी चाहिए।

१३. उत्तरदायित्व को भूल जाना, देर से करना, अच्छी तरह न करना, उसकी उपेक्षा करना, गलती होने पर भी उसे गंभीर न मानना, यह सब उत्तरदायित्व हीनता में आता है।

१४. जो उत्तरदायित्व को बहुत गंभीरता व अच्छी तरह निभाता है, श्रद्धा से कार्यों को करता है, वह लौकिक दृष्टि से तो सफलता और उन्नति प्राप्त करता ही है साथ ही योग में भी अच्छी प्रगति करता है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१५. जैसे व्यक्ति अपनी उन्नति सदा चाहता है, उसमें विकल्प नहीं करता, कभी अपनी अवनति नहीं चाहता, ऐसा ही दूसरे के लिये भी सोचना ईश्वर प्राप्ति में बहुत सहायक होता है।

१६. योगाभ्यासी व्यक्ति का लौकिक व्यवहार भी अच्छा होना आवश्यक है।

१७. योगाभ्यास करते हुए जो जो लाभ हुए हैं उन पर भी विचार करना चाहिए, उन्हें याद रखना चाहिए। ये निराशा के क्षणों में आशा का संचार करने के काम आते हैं।

१८. जिसने पूर्व सज्जा करके सांसारिक संबंधों को अपने मन से एक बार भी न हटाया हो ,वह इन्हें आगे भी नहीं हटा सकता। अतः एक बार तो पूर्ण परिश्रम करके इन्हें हटा दें। पुनः उभरने पर पूर्वसज्जा का उपयोग करें। ऐसा करते करते स्थिति दृढ़ होती जायेगी व इन्हें हटाने में सरलता होती जायेगी, अन्त में इन्हें जीत भी लिया जायेगा।

१९. किसी गुण को प्राप्त करने व किसी दोष को छोड़ने में कितनी ही बार व्यक्ति असफल होवे किन्तु गुण को प्राप्त करने व दोष को छोड़ने का पुरूषार्थ करता रहे, निराश कभी न होवे। निराश हुए बिना पुरूषार्थ करते जाने में सफलता निश्चित है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(विवेक वैराग्य)

१. वैराग्य यदि नहीं है तो वृत्ति निरोध भी नहीं हो सकता।

२. प्रतिकूलता में रूष्ट तथा खिन्न हो जाना विवेक-वैराग्य की प्राप्ति में बाधक है।

३. व्यंङ्ग्यात्मक या हंसी आने वाली भाषा बोलना विवेक-वैराग्य के लिये हानिकर है।

४. साधक गंभीर चिंतन के समय विवेक वैराग्य की ओर बढ़ता है। हंसते समय गंभीर चिंतन समाप्त हो जाता है, फलतः विवेक वैराग्य की स्थिति कम अथवा समाप्त हो जाती है।

(ज्ञान अज्ञान)

१. अच्छे या बुरे कर्मो के पीछे हमारा ज्ञान काम करता है, कर्मों में प्रवृत्त करने वाला ज्ञान है। ज्ञान में त्रुटि आते ही कर्म व उपासना में त्रुटि आ जायेगी। इतना ही नहीं किन्तु ज्ञान में त्रुटि आने से फिर नया ज्ञान प्राप्त करने में भी त्रुटि आ जायेगी।

२. वैराग्य प्राप्त न होने में कारण है 'ज्ञान में त्रुटि होना'। ज्ञान में त्रुटि होने से प्रगति रूक जायेगी, बुद्धि विकसित

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं होगी।

३. सोचने में दोष होने से, व्यक्ति सुख से जीना चाहने पर भी सुख से नहीं जी सकता।

४. अपने प्रत्यक्ष व अनुमान से हुए ज्ञान की सदा ऋषियों के ज्ञान से तुलना करते रहना चाहिए।

५. जहाँ अपना अनुभव व ज्ञान काम न कर पा रहा हो, स्थिति डांवाडोल हो रही हो तब योगाभ्यासी शब्द प्रमाण के आधार पर दृढ़ होता है, अपनी स्थिति को बचाये रख पाता है।

६. सत्यज्ञान पूर्ण निर्णीत होने पर भी यदि उसकी रक्षा न करते रहे, तो बाद में किन्हीं परिस्थितियों से उसमें संशय आ सकता है, मिथ्या ज्ञान भी आ सकता है।

७. अज्ञान और अज्ञान के उत्पादक संस्कारों को पूर्ण रूपेण समाप्त करने पर व्यक्ति शांति का, पूर्ण सुख का अनुभव करता है।

८. यदि हमारी बुद्धि में सम्पूर्ण दिन परमात्मा के साथ आत्मा व अन्य पदार्थों का सतत व्याप्य-व्यापक भाव न बना रहे तो स्पष्ट है कि अज्ञान हममें शेष है। अज्ञान का दण्ड भोगना ही पड़ता है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(सम्यक् दृष्टि)

१. भविष्य में सफलता कितनी भी मिले परंतु वर्तमान में लक्ष्य कम करना आलस्य की बात है।

२. हमारा काम लौकिक व्यक्तियों से समझौता करना नहीं, ऋषियों से समझौता करना है।

३. दुनियाँ क्या सोचेगी यह देखें या ईश्वर क्या सोचेगा यह देखें ? संसार के सही मानने से लाभ भी क्या ? यदि ईश्वर की दृष्टि में वह कार्य गलत हो।

४. जो व्यक्ति ईश्वर की दृष्टि में बुरा है, वह बुरा है जो अच्छा है वह अच्छा है, अच्छे बुरे की कसौटी ईश्वर है, न कि समाज।

५. जैसे सामान्य लौकिक व्यक्ति को दुःख से घृणा और अनिच्छा होती है, वैसे ही योगी को पञ्चेन्द्रिय भोगों में घृणा और अनिच्छा होती है, योगी इन्हें दुःखदायी समझ के प्राप्त नहीं करना चाहता।

६. सामान्य व्यक्ति सोचता है 'कि मैं योग-मार्ग पर चलना तो चाहता हूँ पर मेरी सामर्थ्य नहीं है।' यह बचने वाला व्यक्ति है। सत्यान्वेषी व्यक्ति अल्प सामर्थ्य होते हुए भी उस ओर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चलेगा, अपना सामर्थ्य बढ़ायेगा, उचित साधनों का संग्रह करेगा।

७. योगाभ्यासी भी अन्यों का परीक्षण करता रहता है, उनकी अपने से तुलना करता रहता है, गुणों को ग्रहण कर लेता है। पर दोष के कारण द्वेष नहीं करता।

८. किसी व्यक्ति में कुछ गुणों को देखकर उसके दोषों को भी गुण नहीं मान लेना चाहिए तथा किसी व्यक्ति में कुछ दोष देखकर उसके गुणों को भी दोष न मान लेना चाहिए। जो गुण-दोषों का पृथक् विवेचन नहीं करता, वह विफल हो जाता है।

९. दूसरे से अपेक्षा करने से पूर्व उसकी सामर्थ्य व उसके साधनों को भी देखना चाहिए।

१०. योगाभ्यास को कष्ट न समझकर कर्तव्य समझने पर ही सफलता मिलती है।

११. ईश्वर से भय करके ठीक मार्ग पर चलें। पर बिना भय के केवल साक्षी मानकर भी ठीक चल सकते हैं। यह अधिक अच्छी स्थिति है।

१२. कई बार व्यक्ति घटनाओं को अभूतपूर्व मान लेता है व

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस कारण उनसे अत्यधिक प्रभावित हो जाता है। वास्तव में कोई घटना नई नहीं होती।

१३. विना प्रमाण के किसी व्यक्ति के विषय में मिथ्या धारणा बनाना मानसिक पाप है। जब तक प्रमाणों से सिद्ध न हो तब तक न मानें। न मानने से अंतर भी क्या आयेगा ? पर बिना प्रमाण के मान लिया तो अंतर पड़ेगा। उस व्यक्ति के प्रति द्वेष, उपहास, अवज्ञा, हीनता आदि की भावना उत्पन्न हो सकती है और यह हमारी आध्यात्मिक प्रगति में बाधा खड़ी कर देगी।

१४. झूठे आरोप लगने पर उसका प्रतिकार इसलिए न करें कि आपका अपमान हो रहा है, वरन् इसलिए करें कि यदि प्रतिकार न करें तो यह उसके असत्य को बढ़ाने जैसा होगा।

(कुछ तथ्य)

१. शुद्ध ज्ञान, शुद्ध कर्म, शुद्ध उपासना से ही व्यक्ति योगी बन कर, ईश्वर का साक्षात्कार कर सकता है, अन्यथा नहीं।

२. सांसारिक भोग तो करोड़ों व्यक्तियों को प्राप्त हैं, पर ब्रह्मविद्या तो किसी किसी को ही मिलती है।

३. प्रारम्भिक योगाभ्यासियों का प्रायः यह मन बना रहता है कि ईश्वर प्राप्ति में सुख और सफलता है, परन्तु लौकिक

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साधनों में भी सुख और सफलता है, दोनों को साथ लेकर चल सकते हैं। पर ऐसा हो नहीं सकता।

४. श्रेय मार्ग की ओर परिश्रम करने वाला ही प्रेय मार्ग से बच सकता है, अन्य नहीं। श्रेय मार्ग का परिश्रम ढ़ीला होने पर भी व्यक्ति प्रेय मार्ग की ओर बढ़ जायेगा।

५. जो साधक अति परिश्रम-तपस्या-अनुशासन में नहीं रहा है, जो भौतिकवाद की आंधी से टक्कर लेना नहीं जानता है वह समाज में जाते ही कुछ दिनों में योग को छोड़ देगा और भोगी बन जायेगा।

६. जो यह कहते हैं कि हम मोक्ष नहीं चाहते, उनका यह कथन उचित नहीं है, क्योंकि मोक्ष प्राप्ति अर्थात् पूर्ण दुःख से छूटना सभी चाहते हैं।

७. ब्रह्म प्राप्ति के लक्ष्य वाला व्यक्ति जैसा निष्काम कर्म कर सकेगा, वैसा निष्काम कर्म इस लक्ष्य से रहित वैज्ञानिक कभी नहीं कर सकता।

८. हजारों वैज्ञानिकों की तुलना में एक ब्रह्मवेत्ता द्वारा संसार का उपकार अधिक होता है।

९. हानिकारक, दुःखदायक लगने वाली वस्तु को दूर करने

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का प्रयास कभी अवरूद्ध नहीं होता, व्यक्ति प्रयास करता ही रहेगा। यदि प्रयास नहीं कर रहा है तो स्पष्ट है कि व्यक्ति उसे हानिकारक और दुःखदायी नहीं समझता है।

१०. ज्ञान की अल्पज्ञता के कारण हो जाने वाला अधर्म, शीघ्रता एवं असावधानी के कारण हो जाने वाला अधर्म और ज्ञानपूर्वक इच्छा प्रयत्न करते हुए किया जाने वाला अधर्म, ये क्रमशः उत्तरोत्तर अधिकाधिक पतन की स्थितियाँ हैं।

११. अच्छे काम करें तो विरोधी बुरी बातें दबती जायेंगी, दबी रहेंगी। अच्छे काम छोड़ते ही बुरी बातें हमें दबाने लगेंगी। जैसे परिश्रम करें तो आलस्य नहीं रहेगा, परिश्रम छोड़ते ही आलस्य आयेगा। यह नियम है।

१२. जो मौत को हथेली पर लेकर चलता है, वही सार्वभौम महाव्रतों का पालन कर सकता है। इसके पीछे महान् ज्ञान, बल, वैराग्य अपेक्षित है।

१३. ईश्वर सभी की सामान्य सहायता करता रहता है, चाहे कोई उसके नियम-आदेश माने या न माने। पर धर्माचरण करने वाले को नियमानुसार विशेष सहायता-प्रेम-उत्साह आदि देता है।

१४. व्यक्ति में स्वयं की शक्ति भी है, जिसे वह आचार्य,

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुरू, समाज, पुस्तकों आदि का ठीक उपयोग करके बढ़ा सकता है और तीव्रता से प्रगति कर सकता है। ईश्वर से विशेष सहायता का मिलना तो और अलग बात है।

१५. ईश्वर से सम्बन्ध जुड़ने से विशेष सहायता का मिलना इस प्रकार है जैसे किसी बालक को योग्य माता-पिता मिलने पर सहायता का मिलना। शेष ईश्वर सहायता रहित व्यक्ति तो ऐसे हैं जैसे भटकते अनाथ बच्चे।

१६. जो व्यक्ति संसार से प्रभावित होता है, उसे ईश्वर की सहायता नहीं मिलती।

१७. सकाम शुभ कर्मों को करने वाला भी बुरे कर्मों से पूर्णतया नहीं बच सकता। बुरे कर्मों से पूर्णतया बचने का उपाय मात्र निष्कामता है।

१८. बिना श्रद्धा, विश्वास, प्रेम के न तो आचरण हो सकता है न प्रगति।

१९. व्यक्ति स्वयं ही अनेक प्रकार की समस्यायें उत्पन्न कर लेता है व उनमें फंसा रहता है।

२०. राग-द्वेष की स्थिति में बुद्धि गहराई को नहीं छू सकती।

२१. सिद्धान्त रूप में लिखी हुई बातों का जो व्यक्ति प्रयोग

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करता जायेगा उसे ही ऋषियों और वेदों की बातें समझमें आयेंगी।

२२. संसार का सबसे बड़ा उपकार यह है कि समाज को दिखायें कि वेदों में बताये गये आदर्श, जीवन में उतारे जा सकते हैं। बिना इसके समाज का पतन रूक नहीं सकता।

२३. भोग को मुख्य मानने से व्यक्ति पाप - पुण्य की परिभाषायें तोड़ देता है अथवा उनको अपनी इच्छानुसार बदल देता है।

२४. दयानन्द, नचिकेता आदि आदर्शों से कभी नहीं डिगे, डिगते नहीं दीखते। जिसके मन में तड़प हो, मृत्यु को भी तुलना में छोटा मानता हो, वही ऐसा बन सकता है।

२५. दूसरा व्यक्ति हमें हमारे दोष तब बतायेगा, जब वह हमसे निर्भय हो। यदि उसे पता है कि दोष बताने पर यह स्वीकारेगा नहीं, क्रोधित होगा, द्वेष कर लेगा वा उल्टे दो-चार दोष उसको ही बता देगा, तो वह हमें हमारे दोष क्यों बतायेगा ?

२६. ईश्वर प्राप्ति में लगा साधक ईश्वर प्राप्ति के लिये, ईश्वर प्राप्ति में बाधक वस्तु या व्यक्ति से द्वेष कर बैठे तो उसकी ईश्वर से दूरी बढ़ जायेगी। जिस ईश्वर की प्राप्ति के लिए बाधक वस्तु से द्वेष किया था, वह ईश्वर बाधक वस्तु या व्यक्ति से

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वेष करने के कारण प्राप्त न हो सकेगा।

२७. अपने ईश्वर को श्रेष्ठ मानकर अन्य मत वालों से द्वेष करना, घृणा करना, उन्हें मारना, उनकी हानि करना अनुचित है। लोग इसे ईश्वर के प्रति भक्ति मानते हैं। पर ऐसा करने से तो ईश्वर उनसे दूर हो जाता है।

२८. ईश्वर, जीव और प्रकृति ये तीन पदार्थ अनादि हैं। अनादि इसलिए हैं क्योंकि इनके तीन उत्पादक कारण (निमित्त, उपादान और साधारण) नहीं हैं।

(आत्म निरीक्षण)

१. अतिमन्द बुद्धि वालों को छोड़कर शेष सभी व्यक्ति जो ऋषिकृत ग्रंथों का स्वाध्याय करते हैं, आत्मनिरीक्षण से पता लगा सकते हैं कि वे पूर्ण सत्यवादी, सत्यमानी, सत्यकारी हैं या नहीं।

२. आत्मनिरीक्षण यह बता देता है कि जिन सांसारिक विषयों को हम दुःख रूप पढ़ते, सुनते, समझते हैं, उन्हीं की प्राप्ति की इच्छा अभी हमारे मन में है व उसके लिये प्रयास भी करते रहते हैं।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. आर्ष ग्रंथ जिस प्रयोजन के लिये लिखे गये हैं, उन्हें पढ़कर हम उस प्रयोजन को कितना पूरा कर पा रहे हैं ? उसके लिये कितना प्रयास कर रहें हैं ? यह विचारना चाहिये ।

४. विफलता, क्लेश, पतन जितना होता है, उसके मूल में उतनी हीं मात्रा में अविद्या होती है और जितनी सफलता, सुख, उन्नति होती है उसके मूल में उतनी ही विद्या होती है । अपना परीक्षण करें कि "मैं कहां खड़ा हूँ "। सत्यग्राही व्यक्ति अपने में अविद्या को सहन नहीं करेगा ।

५. आत्मनिरीक्षण करें कि "क्या मैं अपने दोषों से संधि-समझौता तो नहीं करता हूँ "?

६. योगाभ्यासी आत्मनिरीक्षण करता रहे कि मेरे जीवन में कोई आडम्बर तो नहीं है ? मैं केवल दिखावे के लिये तो कोई कार्य नहीं कर रहा हूँ ?

७. आध्यात्मिक प्रगति की अनुभूति होने पर भी साधक को यह सोचते/परीक्षण करते रहना चाहिए कि "मैं कहीं गलत तो नहीं मान बैठा हूँ, बिना प्रगति के प्रगति की अनुभूति तो नहीं कर रहा हूँ" ?

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(दोष)

१. किसी से पूछे कि क्या आपमें राग -द्वेष-क्रोध आदि हैं ? तो उत्तर आता है ये दोष तो सभी में होते हैं। यह अपने दोषों से सन्धि - समझौता करना है।

२. कभी-कभी व्यक्ति (साधक) सोचता है कि जैसा मैं हूँ वैसा लोग मुझे नहीं समझते। यहाँ सूक्ष्म रूप में लोकैषणा है। इससे साधक का पतन होगा।

३. शरीरधारियों मे पूर्णता किसी में नहीं, दोष तो सबमें रहते हैं। अतः यह सिद्धान्त नहीं बना सकते कि हम दोष रहित व्यक्ति से ही कुछ सीखेंगे। ऐसा सोचेंगे तो किसी से कुछ भी नहीं सीख सकेंगे।

४. कमजोर व्यक्ति सोचता है कि मेरे दोष सबके बीच में न बताये जायें, अन्यथा अपमान होगा। अच्छा योगाभ्यासी व्यक्ति यह सोचता है कि सबके मध्य में मेरे से मेरे दोष पूछे जायें तो अच्छा है, ताकि मेरा अपमान हो और मैं सुधर सकूँ।

५. प्रायः व्यक्ति को यह विश्वास नहीं होता है कि ईश्वर भी गुरू की तरह सहायता करता होगा।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६. जिसे अपने दोषों-त्रुटियों से कष्ट नहीं होता, वह सुधर नहीं सकता।

७. कई बार व्यक्ति यह सोचता है कि वैदिक योग मार्ग को जान समझकर तथा वैज्ञानिकों की बात भी जान समझकर, मैं योग की कोई नई व सरल विधि निकालूंगा जिसके द्वारा शीघ्र व सरलता से चरम लक्ष्य प्राप्त हो सकेगा। यह उसका भ्रम है, क्योंकि ऋषियों द्वारा बताया गया वैदिक योग मार्ग सबसे सरल व अन्तिम है, उसमें कोई संशोधन करना योग के विधान में जटिलता पैदा करेगा, दूसरे शब्दों में यह योग के विपरीत चलना होगा।

८. दोषी व्यक्ति जब अपने दोषों का समर्थन भी करने लगता है, तो वह और अधिक पक्षपाती, हठी और दुराग्रही बन जाता है।

९. कम योग्यता के समय सम्मान की इच्छा थोड़ी भी अवशिष्ट रही है तो अधिक योग्यता प्राप्त होने पर वह बहुत तीव्रता से बढ़ सकती है।

१०. पढ़े-सुने विषयों को जब तक अनुभूति का विषय नहीं बनाते तब तक प्रगति नहीं होगी।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

११. गौण-मुख्य को जो सही व निर्धारित नहीं कर सकता, वह विफल होगा।

१२. अति आशा में, दृढ़ विश्वास में अभिमान न आये, यह ध्यान रखें। अभिमान से बचने के लिए ईश्वरार्पण करें, सब सामर्थ्य ईश्वर प्रदत्त मानें।

१३. हम परिश्रम से बचना चाहते हैं, अतः प्रमाणों से सिद्ध/निर्णीत बातों पर भी नहीं चलते, उन्हें जीवन में नहीं उतारते।

१४. हमारे जीवन व्यवहार में अनेक बातें ऐसी होती हैं जो हमारे लक्ष्य में बाधक होती हैं, फिर भी हम उन्हें अच्छा या प्रिय मानकर करते रहते हैं, या उन बातों की ओर ध्यान ही नहीं देते।

१५. कई बार कठोर वाणी बोलता हुआ भी व्यक्ति, यह अनुभव नहीं करता कि मैं कठोर बोल रहा हूँ।

१६. मानसिक दोषों को समाधि प्राप्त किये बिना, पूरी तरह दूर नहीं किया जा सकता।

१७. कर्तव्य-अकर्तव्य, धर्म-अधर्म की अन्तिम कसौटी/अन्तिम प्रमाण ईश्वर और वेद ही है। इस बात को हम सिद्धान्त रूप में मानते हैं। पर जैसे ही स्वार्थ से विरोध आता है तो हम

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ईश्वर और वेद की बात को छोड़ देते हैं। ईश्वर और वेद की बात तभी तक मानते हैं जब तक हमारा प्रयोजन सिद्ध होता रहता है। यह दोष दूर करना आवश्यक है।

(कुसंस्कार)

१. संस्कारवशात्, विवशता से त्रुटि हो जाने पर जो कुसंस्कार बनते हैं वे बहुत हल्के होते हैं,पर जानबूझकर, सुख ले लेकर जो त्रुटि की जाती है/भोग भोगा जाता है उसके कुसंस्कार बहुत दृढ़ बनते हैं। इन्हें हटाने में भी बहुत परिश्रम व काल लगता है।

२. उत्पन्न होने वाली चीज नष्ट होती है। जो बनाई जा सकती है, वह नष्ट भी की जा सकती है। इसी सिद्धान्त के अनुसार कुसंस्कारों को भी रोका जा सकता है, दुर्बल किया जा सकता है और उन्हें नष्ट भी किया जा सकता है।

३. जैसे हम अपने दुःख का हर प्रकार से विरोध करते हैं, उसे हटाने के लिये पूरा प्रयत्न करते हैं, स्वयं कष्ट उठाकर भी उसका नाश करते हैं, वैसे ही योगाभ्यासी को कुसंस्कारों से लड़ना पड़ता है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४. आंतरिक दोषों की मात्रा बाहरी दोषों से बहुत अधिक होती है। बिना समाधि के, जन्म-जन्मान्तर के सूक्ष्म कुसंस्कारों को तो व्यक्ति देख भी नहीं पाता है, उन्हें हटाने की बात तो दूर रही।

५. तप रहित व्यक्ति कुसंस्कारों के उभरने पर भोग की ओर झुक जाता है। तपस्वी व्यक्ति कुसंस्कारों के उभरने पर उनसे लड़ता है और उन्हें जीत लेता है।

६. सतत ईश्वर-प्रणिधान बनाये रखने से जन्म -जन्मान्तर के कुसंस्कार क्षीर्णता को प्राप्त होते रहते हैं, उन पर चोट पहुँचती रहती है, फलतः वे धीरे धीरे नष्ट होते जाते हैं।

७. ज्ञान को प्रयास पूर्वक पकड़ कर रखे बिना, उसे शोधे बिना तथा अज्ञान को हटाये बिना कुसंस्कारों को मार नहीं सकते, पाप से बच नहीं सकते।

८. जो व्यक्ति यह सोचकर चलता है कि जन्म-जन्मान्तर के कुसंस्कार हैं जाते जाते जायेंगे, यह टालमटोल तथा परिश्रम से बचने की बात है, क्योंकि ऐसा व्यक्ति उन कुसंस्कारों को दूर करने का प्रयत्न भी छोड़ देता है, जो शीघ्र ही दूर किए जा सकते हैं।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(उचित अनुचित व्यवहार)

१. जो वस्तु जितनी लाभकारी हो, उसे उतनी ही महत्ता देनी चाहिए । चूँकि ईश्वर हमारे लिए सबसे अधिक लाभकारी है अतः उसे सर्वोच्च महत्ता देनी चाहिए, उससे सर्वाधिक प्रेम करना चाहिए । यह यथायोग्य व्यवहार है ।

२. ईश्वर से उचित सम्बन्ध बनाने के लिये कर्तव्यों को करना व अकर्तव्यों को छोड़ना आवश्यक है ।

३. जो व्यक्ति न्याय बुद्धि छोड़ देता है वह मनुष्यपन से दूर हट जाता है । ईश्वर, योगी, ऋषि हमारा सबसे अधिक हित चाहते हैं, उनकी बातों को न मानना अन्यायबुद्धि है, पक्षपातपूर्ण व्यवहार है, अधर्म है ।

४. ईश्वर के साथ उचित व्यवहार जीवों के चरम लक्ष्य को पूरा करने का निश्चित उपाय है, आधार है । उचित व्यवहार करने पर सफलता व अनुचित व्यवहार करने पर असफलता निश्चित है । ईश्वर से कैसा सम्बन्ध रहना चाहिए ? जैसा पिता-पुत्र का, गुरू-शिष्य का, राजा-प्रजा का, मित्र-मित्र का, उपास्य-उपासक का, स्वामी-सेवक का, व्याप्य-व्यापक का सम्बन्ध होता है ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. आत्मनिरीक्षण करें कि मैं उपरोक्त सम्बन्धों में से किस प्रकार के सम्बन्ध को बनाये रखता हूँ ? कैसा व कितना ? हाँ या ना ? यदि हम ईश्वर के साथ ऐसा व्यवहार/सम्बन्ध नहीं रखते हैं तो हमारा ईश्वर के साथ यह अनुचित व्यवहार है।

६. न्याय पूर्वक प्राप्त सम्मान में, ईश्वर के सम्मान से भी अधिक अपना सम्मान चाहना अन्याय है, क्योंकि उन गुणों की प्राप्ति में अधिकांश सहयोग ईश्वर का है और तदनुरूप अधिक सम्मान ईश्वर का न मानना ईश्वर के प्रति अन्याय है। ऐसी स्थिति में ब्रह्मप्राप्ति असंभव है।

(सुख दुःख)

१. बचपन से अब तक सुख के पीछे दौड़ रहे हैं पर अधिकांश मनुष्यों को यह पता नहीं है कि सच्चा सुख किसमें है और उसे कैसे प्राप्त किया जाता है ?

२. सुख व सुख के साधनों को चाहते सब हैं, पर वे जिसे सुख और सुख का साधन मानते हैं इसका भेद हो जाने से मार्ग में परिवर्तन हो जाता है। एक भौतिकवादी बन जाता है, एक अध्यात्मवादी।

३. लौकिक सुख को भी अच्छी तरह वही व्यक्ति भोग

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकता है जो संयम पूर्वक भोगता है। उदाहरण के लिए जो स्वाद के कारण अधिक खाता हैं वह तो रोगी होकर सुख भी नहीं भोग पाता।

४. जो व्यक्ति योगी/ब्रह्मवेत्ता बनना चाहता है, वह पाँच इन्द्रियों के सुखों को लेता हुआ कभी सफल नहीं हो सकता।

५. 'विषय भोगों में विशुद्ध सुख है' यह प्रतीति (मिथ्या ज्ञान) व्यक्ति को उन्हें त्यागने में रूचि पैदा नहीं करती।

६. एक इन्द्रिय का सुख लेने वाला अन्य इन्द्रियों के सुख लेने से नहीं बच पायेगा।

७. एक इन्द्रिय का सुख लेते हैं तो अन्य इन्द्रियों में भी उत्तेजना हो जाती है, यह अवश्यम्भावी है। नेत्र से मिठाई में सुख देखा तो रसना में भी उत्तेजना होगी, मुख में पानी आयेगा, उस ओर हाथ भी बढ़ेगा। सुंदर रूप वाले की आवाज भी सुनना चाहते हैं, फिर उसे छूना भी चाहते हैं। इसके विपरीत यदि एक इन्द्रिय पर नियंत्रण रहे तो अन्यों पर भी नियंत्रण आता है।

८. "इन्द्रियों के सुख की इच्छा को जीता जा सकता है", इसे संभव तो अनेक व्यक्ति मानते हैं, पर 'इसे मैं जीतूँगा, शीघ्र जीतूँगा' ऐसी तीव्र भावना व तदनुरूप प्रयास नहीं करते।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

९. ऋषि कहते हैं भोग में दुःख है, फिर भी हम भोग में सुख लेते हैं तो स्पष्ट है कि ऋषि व हमारी बात में टकराव हो रहा है। ऐसे में अपनी धारणा को छोड़कर ऋषि की बात ही माननी होगी, अन्यथा योग में सफलता नहीं मिल सकती।

१०. दुःखों से युक्त व्यक्ति कभी ईश्वर की ओर नहीं बढ़ सकता उसमें एकाग्रता ही नहीं होगी।

११. व्यक्ति का यह सोचना मिथ्या है कि परिश्रम से दुःख होता है। परिश्रम से तो सदा सुख की प्राप्ति होती है।

१२. तप को लक्ष्य प्राप्ति में साधन मान लें तो वह दुःख नहीं देता, तब तप करने में प्रसन्नता होती है। तप को उपयोगी न समझें तो दुःख होगा।

(सत्यासत्य)

१. मनमानी बात मानना मानव धर्म नहीं है। प्रमाणों से सिद्ध बात को मानना ही धर्म है। यही सत्यासत्य के ग्रहण-त्याग का अर्थ है।

२. मन की चंचलता रूकने पर सत्य-असत्य, कर्तव्य- अकर्तव्य, न्याय-अन्याय ठीक-ठीक दीखते हैं।

३. अपने मन में एक मूल भावना सदा बनाये रखें "मुझे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

केवल सत्य की चाह है, मैं सत्य को ही ग्रहण करूंगा" इससे व्यक्ति अटल रहता है, कभी डगमगाता नहीं है। ऐसा व्यक्ति हमेशा जीतेगा। परन्तु जो व्यक्ति सत्य न चाहकर सुख चाहता है, अपने को जो अच्छा लगे उसे ही चाहता है, भले ही वह असत्य/अधर्म/अन्याय क्यों न हो, ऐसा व्यक्ति योग में हमेशा असफल होगा।

४. जिसे किसी भी प्रकार का भय रहेगा, वह पूर्ण सत्यवादी हो ही नहीं सकता।

५. सत्यवादी प्रायः यहाँ आकर ठहर जाता है कि "मौत आ रही हो और थोड़ा झूठ बोलने पर बचाव होता हो तो झूठ बोल देना चाहिए"। पर होना यह चाहिए कि उस समय भी सत्य ही बोले।

६. विशुद्ध सत्यता को चाहने वाला मान-अपमान, हानि-लाभ आदि लौकिक दृष्टि रख कर कभी आगे नहीं बढ़ सकता। मान-अपमान से प्रभावित होने वाला असत्य बोल ही देगा।

७. सत्यग्राही व्यक्ति मृत्यु को अपना लेगा पर ईश्वर की उपासना, उसकी आज्ञा को नहीं छोड़ेगा।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८. सत्यग्राही व्यक्ति कभी ऐसा नहीं करेगा कि केवल पढ़ता जाये, पढ़ाता जाये और उपदेश भी करे परन्तु स्वयं उसका आचरण न करे। उसे ऐसी स्थिति सहन नहीं होगी। यह हो सकता है कि वह सब को पूरा पूरा आचरण में न उतार पाया हो, पर उसके लिए संघर्ष, प्रयत्न सतत् करता रहेगा।

९. बहुत परिश्रम-परीक्षण करने पर ही व्यक्ति सदा सत्य बोल पाता है। अन्यथा अज्ञान पूर्वक बहुत सा असत्य बोलता रहता है।

१०. ज्ञानपूर्वक असत्य बोलने के पश्चात् उसी व्यक्ति के सामने अपने दोष को स्वीकारना चाहिए, जिसके सामने असत्य बोला था। यह कार्य जितना शीघ्र हो, उतना अच्छा है, जितना विलम्ब होता जायेगा उतना ही दोष बढ़ता जायेगा और असत्य के संस्कार अधिक दृढ़ होते जायेंगे।

११. सत्य अपने आप नहीं जीतता, उसे पुरूषार्थ से जिताना पड़ता है।

१२. ईश्वर की व्यवस्था में सत्य की ही जीत होती है। मनुष्य कृत व्यवस्था में अन्याय भी होता है अतः झूठ जीतता प्रतीत होता है। अन्तिम जय-पराजय तो ईश्वर के न्यायालय

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में ही होती है। जीत का अर्थ है - मोक्ष प्राप्ति, हार का अर्थ है मोक्ष की अप्राप्ति।

१३. शब्द प्रमाण वैज्ञानिकों का व ऋषियों का दोनों का मान्य है। परन्तु सत्य की मात्रा ऋषियों में अधिक होती है। वैज्ञानिक पक्षपात से ऊपर नहीं उठ पाते। उनमें अपने देश का पक्षपात रहता है। वे धन व यश के लिये असत्य भी बोल देते हैं।

(उपासना)

१. मन संध्या में नहीं लग रहा है, इधर-उधर जा रहा है तो समझना चाहिए कि संसार की उपासना चल रही है।

२. उपासना काल में जब व्यक्ति संध्या के मंत्रों का अर्थ शब्दशः न करके भावार्थ से ही काम चलाने लगता है तो यह आलस्य-उपेक्षा की शुरूआत है। धीरे धीरे वह छोटे भावार्थ करता है, फिर केवल मूल पाठ करता है और हो सकता है आगे चलकर वह मूल पाठ को भी छोड़ दे।

३. साधक यह देखे कि दिन भर में मेरी ईश्वर की उपासना अधिक रहती है या भौतिक पदार्थों और भोगों की ? यदि भौतिक पदार्थों व भोगों की उपासना अधिक है तो स्पष्ट है कि ईश्वर प्राप्ति का लक्ष्य अभी मुख्य नहीं बना है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(मनोनियंत्रण)

१. सुख, स्वतंत्रता, निर्भयता, आदि की सतत अनुभूति होने और आत्मशुद्धि के लिए आवश्यक है कि मन पर सदा नियन्त्रण रहे।

२. मन के रूकते ही सब इन्द्रियाँ अपने विषयों की ओर दौड़ लगाना बंद कर देती हैं।

३. एकान्त में एकाग्रता अधिक होगी, यदि स्मृति न उठायें तो। क्योंकि एकान्त में नये आलम्बन उपस्थित नहीं होते हैं।

४. जिसकी संसार में रूचि है उसे मनोनियंत्रण करते समय संघर्ष करना पड़ता है, फलतः शीघ्र ही थकान होती है।

५. जिसको यह लगता है कि मन में उठे बुरे संस्कार रूक नहीं रहे हैं, तो स्पष्ट है कि वह मन को जड़ नहीं मान पा रहा है, चेतन मान रहा है। मन को जड़ मानते ही वृत्तियों पर नियंत्रण आ जाता है।

६. वितर्कों को न उठने देना चाहते हैं तो पहले से ही मन बुद्धि पर नियंत्रण रखना होगा।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

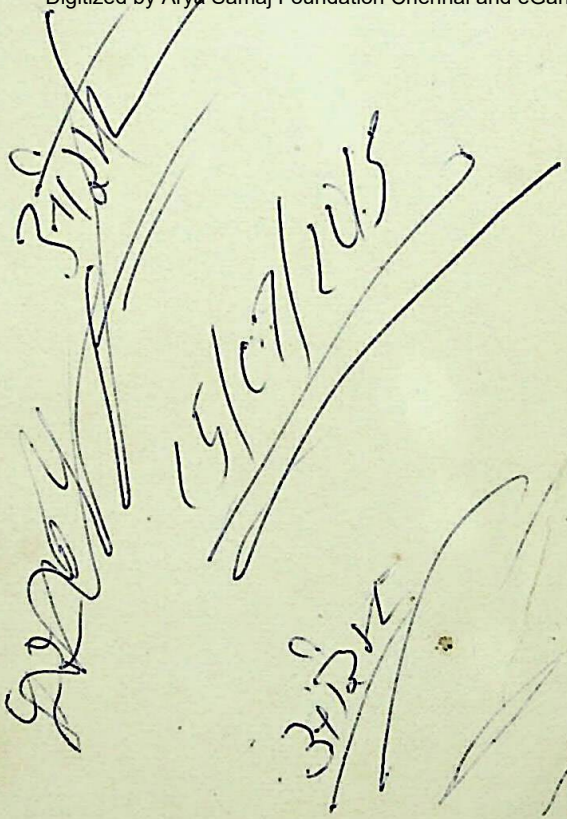

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

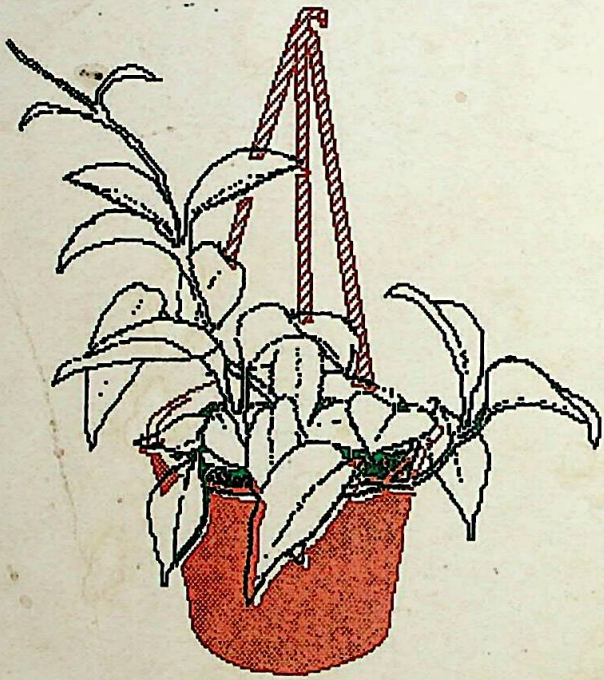

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.